पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2011 का सिविल रिट क्षेत्राधिकार मामला संख्या. 4937

==========

विकास कुमार शर्मा, स्वर्गीय कुंज बिहारी सिन्हा के पुत्र सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश, मोहल्ला आगरवा के निवासी, थाना टाउन, पी. ओ. मोतिहारी, जिला पूर्वी चंपारण वर्तमान में 202, सान्याल एन्क्लेव, बुधमार्ग, थाना कोटवाली, पी. ओ. जी. पी. ओ. जिला पटना

..... याचिकाकर्ता/याचिकाकर्तागण

बनाम

1. सचिव, कार्मिक और प्रशासनिक सुधार विभाग, बिहार, पटना के माध्यम से बिहार राज्य
2. पटना उच्च न्यायालय, अपने महानिबंधक, पटना के माध्यम से
3. महानिबंधक , पटना उच्च न्यायालय, पटना

..... उत्तरदाता/प्रतिवादीगण

==========

के साथ

2011 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामला संख्या 4749

==========

विकास कुमार शर्मा, स्वर्गीय कुंज बिहारी सिन्हा के पुत्र सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश, मोहल्ला आगरवा निवासी, थाना टाउन, पी. ओ. मोतिहारी, जिला पूर्वी चंपारण वर्तमान में 202, सान्याल एन्क्लेव, बुधमार्ग, थाना कोतवाली, पी. ओ. जी. पी. ओ. जिला पटना

..... याचिकाकर्ता/याचिकाकर्तागण

बनाम

1. सचिव, कार्मिक और प्रशासनिक सुधार विभाग, बिहार, पटना के माध्यम से बिहार राज्य

2. पटना उच्च न्यायालय, अपने महानिबंधक, पटना के माध्यम से

3. महानिबंधक, पटना उच्च न्यायालय, पटना

..... याचिकाकर्ता/याचिकाकर्तागण

==========

बिहार पेंशन नियम्, 1950 - नियम् 43(b)

न्यायिक सेवा-व्यक्तिगत कारण के लिए न्यायिक पद के दुरुपयोग के आरोप में याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय कार्यवाही-के द्वारा निलंबित कर दिया गया था और उच्च न्यायालय द्वारा रद्द किए गए वेतन के सुपर टाइम स्केल प्रदान किए गए अधिकारियों की सूची से वापस ले लिया गया था-एसएलपी के माध्यम से चुनौती दी गई-सर्वोच्च न्यायालय ने पटना उच्च न्यायालय को विभागीय कार्यवाही प्रारम्भ करने की अनुमति दी-याचिकाकर्ता विभागीय कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान सेवानिवृत्त हुए और इसलिए, बिहार पेंशन नियम, 1950 के नियम 43(बी) के तहत कार्यवाही जारी रही-5 प्रतिशत पेंशन रोकने की सजा पारित की गई। इसलिए वर्तमान याचिका को फाइल किया गया। निर्णित किया गया कि विभागीय कार्यवाही निष्पक्ष तरीके से संचालित की गई थी। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पहले की अस्वीकृति के मद्देनजर याचिकाकर्ता यह दलील नहीं हो सकता कि पटना उच्च न्यायालय को विभागीय कार्यवाही शुरु करने का अधिकार नहीं था, क्योंकि वह राज्य सरकार में प्रतिनियुक्ति पर था - सेवा में रहते हुए शुरु की गई विभागीय कार्यवाही बिहार पेंशन नियमावली के तहत सेवानिवृत्ति के बाद भी जारी रहा। चूँकि याचिकाकर्ता को आरोपों का दोषी ठहराया गया था, वह वेतन के सुपर टाइम स्केल का हकदार नहीं है-विभागीय कार्यवाही के निष्कर्षों को बरकरार रखा गया। हालाँकि प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा, हमेशा के लिए पाँच प्रतिशत पेंशन की कटौती को, दूरी बार देखने का आदेश दिया गया।

पश्चिम बंगाल और अन्य बनाम निरपेंद्र नाथ बागची, ए.आई.आर.[1966 SC447(1)]शंभु राज बनात बिहार राज्य सरकार और अन्यः 2000(1) पी.एल.जे.आर., भारत संघ और अन्य बनाम जानकीरामः(1991)4 एस.सी.सी. 109 पर भरोसा किया गया।

[पारा 57, 63(iii), 64, 65, 67, 68, 69, 70 और 71]

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2011 का सिविल रिट क्षेत्राधिकार मामला संख्या. 4937

==========

विकास कुमार शर्मा, स्वर्गीय कुंज बिहारी सिन्हा के पुत्र सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश, मोहल्ला आगरवा के निवासी, थाना टाउन, पी. ओ. मोतिहारी, जिला पूर्वी चंपारण वर्तमान में 202, सान्याल एन्क्लेव, बुधमार्ग, थाना कोटवाली, पी. ओ. जी. पी. ओ. जिला पटना

..... याचिकाकर्ता/याचिकाकर्तागण

बनाम

1. सचिव, कार्मिक और प्रशासनिक सुधार विभाग, बिहार, पटना के माध्यम से बिहार राज्य
2. पटना उच्च न्यायालय, अपने महानिबंधक, पटना के माध्यम से
3. महानिबंधक , पटना उच्च न्यायालय, पटना

..... उत्तरदाता/प्रतिवादीगण

==========

के साथ

2011 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामला संख्या 4749

==========

विकास कुमार शर्मा, स्वर्गीय कुंज बिहारी सिन्हा के पुत्र सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश, मोहल्ला आगरवा निवासी, थाना टाउन, पी. ओ. मोतिहारी, जिला पूर्वी चंपारण वर्तमान में 202, सान्याल एन्क्लेव, बुधमार्ग, थाना कोतवाली, पी. ओ. जी. पी. ओ. जिला पटना

..... याचिकाकर्ता/याचिकाकर्तागण

बनाम

1. सचिव, कार्मिक और प्रशासनिक सुधार विभाग, बिहार, पटना के माध्यम से बिहार राज्य

2. पटना उच्च न्यायालय, अपने महानिबंधक, पटना के माध्यम से

3. महानिबंधक, पटना उच्च न्यायालय, पटना

..... याचिकाकर्ता/याचिकाकर्तागण

==========

उपस्थिति

(2011 के सिविल/दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामले संख्या 4937 में)

याचिकाकर्ताओं के लिए: श्री नंद किशोर सिंह, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी/ओं के लिए: श्री पीयूष लाल, अधिवक्ता

(2011 के सिविल/दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामले संख्या 4749 में)

याचिकाकर्ताओं के लिए: श्री नंद किशोर सिंह, अधिवक्ताः

प्रत्यर्थी/ओं के लिए: श्री पीयूष लाल, अधिवक्ता

==========

कोरम: माननीय मुख्य न्यायमूर्ति

एवं

माननीय न्यायमूर्ति श्री राजीव रॉय

सी. ए. वी. निर्णय

(द्वारा: माननीय न्यायमूर्ति श्री राजीव रॉय)

तिथी: 01-02-2024

याचिकाकर्ता द्वारा दो रिट याचिकाएं दायर की गई हैं। पहली रिट याचिका 2011 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 4937 को निम्नलिखित राहतों के अनुदान के लिए प्राथमिकता दी गई हैः

i) बिहार पेंशन नियम 1950 के नियम 43 बी के तहत माननीय पटना उच्च न्यायालय की स्थायी समिति द्वारा प्रशासनिक पक्ष से पारित आदेश को रद्द करने के लिए प्रमाण पत्र की प्रकृति में एक रिट जारी करना, जिसके तहत और जहां याचिकाकर्ता को स्वीकार्य 5 प्रतिशत से कम पेंशन हमेशा के लिए काट ली गई है और निलंबन की अवधि को इस तरह से माने जाने का निर्देश दिया गया है, जिसे ज्ञापन संख्या 14452 दिनांक 25.09.10 के तहत सूचित किया गया है।

(ii) कर्तव्य पर याचिकाकर्ता के निलंबन की अवधि को सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए मानने के लिए प्रत्यर्थी अधिकारियों को निर्देश देने और आदेश देने के लिए अनिवार्य प्रकृति में एक परिणामी रिट जारी करना और उसी से निकलने वाले सभी परिणामी लाभों को प्रदान करना, यानी स्वीकार्य भत्तों यानी डी. ए. एम.ए. एच. आर. ए., राशि भत्ता, ईंधन भत्ता, समाचार पत्र भत्ता, पुस्तकालय भत्ता आदि के साथ वेतन का पूरा भुगतान करना।

(iii) अनिवार्य प्रकृति का एक परिणामी रिट जारी करना और प्रत्यर्थी अधिकारियों को अर्जित अवकाश के साथ पेंशन की गणना के लिए निलंबन की अवधि को गिनने और अर्जित अवकाश की शेष अवधि (300-265 = 35 दिन) के लिए छुट्टी नकदीकरण के चौथे स्लैब के साथ-साथ पूर्ण पेंशन का भुगतान करने का निर्देश देना और आदेश देना।

2. दूसरी रिट याचिका, 2011 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 4749 निम्नलिखित राहतों के अनुदान के लिए दायर की गई हैः

(i) माननीय पअना उच्च न्यायालय की अधिसूचन संख्या 254 ए दिनांक 10.07.2006 को रदद करने के लिए प्रमाणपत्र की प्रकृति में एक रिअ जारी करना जिसे ज्ञापन संख्या 6643 दिनांक 11 जुलाई, 2006 जिसके तहत याचिकाकर्ता वेतन का सुपर

टाइम स्केल दिया प्रदान किया गया जिसे माननीय न्यायालय के अधिसूचना संख्या 233 ए दिनांक 23 जून 2006 द्वारा वापस ले लिया गया।

(ii) प्रत्यर्थी अधिकारियों को परिणामी लाभों के साथ सुपर टाइम स्केल पर याचिकाकर्ता की पदोन्नति को बहाल करने के लिए निर्देश देने और आदेश देने के लिए अनिवार्य प्रकृति में एक परिणामी रिट जारी करना।

3. रिट याचिकाओं की ओर ले जाने वाले मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैंः

4. बिहार लोक सेवा आयोग (अब संक्षिप्त में 'बी. पी. एस. सी.') द्वारा आयोजित 22वीं संयुक्त प्रतियोगी परीक्षा (15वीं न्यायिक सेवा) के परिणाम के आधार पर, याचिकाकर्ता को 1.4.1975 को दरभंगा में न्यायिक मजिस्ट्रेट /दंडाधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था। नियत समय में, उन्हें 'बिहार सुपीरियर ज्यूडिशियल सर्विस' में पदोन्नत किया गया और मार्च, 1990 के महीने में उन्हें अपर जिला और सत्र न्यायाधीश, मुजफ्फरपुर के रूप में तैनात किया गया।

5. बिहार सुपीरियर ज्यूडिशियल सर्विस में उनकी पुष्टि 19.10.1992 को की गई और 1.2.1997 से पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ 16.12.1999 को चयन ग्रेड संवर्ग में पदोन्नत किया गया। बाद में, याचिकाकर्ता को वर्ष 2001 में जिला और सत्र न्यायाधीश के रूप में और फिर बिहार राज्य विधि आयोग के सदस्य सचिव के रूप में नियुक्त किया गया। इसके बाद बिहार न्यायिक अधिकारी प्रशिक्षण संस्थान, पटना (अब बिहार न्यायिक अकादमी) के निदेशक के रूप में उनकी नियुक्ति।

6. यह उनका मामला है कि श्री बिपिन बिहारी वर्मा, तत्कालीन जिला न्यायाधीश, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी और एक वकील श्री योगेश चंद्र वर्मा के चचेरे भाई, जिनके साथ याचिकाकर्ता और उनके परिवार के तनावपूर्ण संबंध थे, ने उनके खिलाफ साजिश रची।

7. इस प्रकार, जब एक मोहम्मद अजहर द्वारा पटना उच्च न्यायालय को भेजी गई आरोप याचिका पर न्यायालय ने जिला न्यायाधीश, मोतिहारी से रिपोर्ट माँगी; श्री बी. बी. वर्मा ने आरोपों की सच्चाई की जांच करने के बजाय गैर-मौजूद तथ्यों के आधार पर उनके खिलाफ पक्षपातपूर्ण रिपोर्ट प्रस्तुत की।

8. इसके बाद, पटना उच्च न्यायालय की स्थायी समिति ने दिनांक 06.07.2006 की अपनी बैठक में अनुशासनात्मक कार्यवाही की प्रत्याशा में याचिकाकर्ता को निलंबित करने का निर्णय लिया, जिसे ज्ञापन संख्या 6631-33 दिनांकित 10.07.2006 के माध्यम से उन्हें सूचित किया गया। उन्हें पहले दिए गए सुपर टाइम स्केल को भी ज्ञापन संख्या 6643-47 दिनांकित 11.07.2006 के माध्यम से वापस ले लिया गया था। इसके बाद ज्ञापन सं. 9925 दिनांकित 25.09.2006 द्वारा उन्हें आरोपों का ज्ञापन दिया गया।

9. याचिकाकर्ता ने अपने निलंबन के आदेश की वैधता के साथ-साथ कार्यवाही की वैधता को चुनौती देते हुए 2007 का सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 5500 दायर किया। वर्ष 2006 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 13586 के माध्यम से एक अन्य रिट याचिका दायर की गई ,जिसमे उनके सुपर टाइम स्केल वापस लेने के आदेश को चुनौती दी गई थी

10. दोनों रिट आवेदनों को पटना उच्च न्यायालय द्वारा 30.04.2008 को अनुमति दी गई थी। तदनुसार, ज्ञापन 8133 दिनांक 24.5.2008 और 8715 दिनांक 29.5.2008 के तहत संप्रेषित आदेशों के माध्यम से उनके निलंबन आदेश को रद्द कर दिया गया था। । याचिकाकर्ता को बाद में प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, कटिहार के रूप में तैनात किया गया और उन्होंने 7.8.2008 को अपने कार्य का प्रभार संभाला।

11. इसके बाद पटना उच्च न्यायालय ने अपने प्रशासनिक पक्ष में 2008 के एसएलपी (सिविल) संख्या 22890 और 23,747 को प्राथमिकता देते हुए दिनांक 30.04.2008 के आदेश को चुनौती दी। उक्त S.L.Ps. को 19.09.2008 को एक साथ लिया गया था

12. याचिकाकर्ता स्टे/रोक को खाली करने के लिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष पेश हुआ, जिसके बाद मामलों को एक साथ लिया गया और 03.10.2008 के एक आदेश के अनुसार, अंतरिम स्टे को पूर्ण कर दिया गया और S.L.Ps / एस. एल. पी. का निपटारा कर दिया गया। और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने याचिकाकर्ता को नोटिस जारी करते हुए उपरोक्त आदेश दिनांक 30.04.2008 पर रोक लगा दी। माननीय सर्वोच्च न्यायालय का आदेश इस प्रकार हैः

"पक्षों के लिए विद्वान वकील सुना।

यहाँ प्रतिवादी इस न्यायालय द्वारा 19.09.2008 को पारित रोक को खाली करना चाहता है। उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने प्रतिवादी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही लंबित रहने तक निलंबन के आदेश को रद्द कर दिया है।

इस न्यायालय द्वारा 19.09.2008 पर पारित अंतरिम आदेश को निरपेक्ष बना दिया गया है। हम विशेष अनुमति याचिका का इस निर्देश के साथ निपटारा करते हैं कि उच्च न्यायालय प्रतिवादी के खिलाफ लंबित अनुशासनात्मक कार्यवाही को चार सप्ताह की अवधि के भीतर पूरा करे और प्रतिवादी तब तक निलंबन में रहेगा।

तद्नुसार एस. एल. पी. का निपटारा किया जाता है। "

13. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित आदेश के बाद, याचिकाकर्ता को एक बार फिर निलंबित कर दिया गया। विभागीय कार्यवाही 22.12.2008 और 19.03.2009 को शुरू हुई और, प्रस्तुतकर्ता अधिकारी ने तीनों उद्धृत गवाहों की जांच करने के बाद और दस्तावेजों ने उनके मामले को शांत किया और बिहार सी. सी. ए. नियम, 2005 के नियम 17 के उप नियम 16 के तहत लिखित में बचाव का बयान दाखिल करने के लिए 30.03.2009 तक पर कार्यवाही स्थगित कर दी गई।

14. याचिकाकर्ता,निलंबन के जारी रहते हुए इस बीच, 31.10.2009 को सेवानिवृत्त हुए जिसके बाद बिहार पेंशन नियम, 1950 (अब से संक्षिप्त 'नियम' के लिए) आदेश/ज्ञापन सं. 17602 दिनांक 16.11.2009 के नियम 43 (b) के तहत कार्यवाही को परिवर्तित कर दिया गया था।

15. सबूत को 11.12.2009 को बंद कर दिया गया। याचिकाकर्ता ने आरोप के लिए 21.12.2009 को अपना बचाव का लिखित बयान दायर किया जो इस प्रकार हैः

श्री विकास कुमार शर्मा, निदेशक, न्यायिक अधिकारी प्रशिक्षण संस्थान के खिलाफ चार्ज फ्रेम का लेख, जो वर्तमान में पटना व्यवहार न्यायालय में प्रस्तुत किया गया था।

यह बताया गया है कि श्री वी. के. शर्मा निदेशक, न्यायिक अधिकारी प्रशिक्षण संस्थान, पटना के रूप में तैनात थे। तीन बार तत्कालीन जिला और सत्र न्यायाधीश, मोतिहारी से जिला मजिस्ट्रेट/दंडाधिकारी , मोतिहारी पर प्रभाव डालने के उद्देश्य से मुलाकात की, ताकि उस समय जिला मजिस्ट्रेट/दंडाधिकारी के समक्ष लंबित मामले में उनके पक्ष में अनुकूल आदेश पारित किए जा सकें और इसी तरह सी. जे. एम. मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी , मोतिहारी पर दबाव डाला कि वे तुर्कौलिया थाना मामला संख्या 318/2005 पंजीकृत आई.पी. सी. की धारा 147,148,149,307,302 और 120 (बी) के साथ-साथ 27 शस्त्र अधिनियम के तहत घटना दिनांक 12.12.2005, जो ग्राम जयसिंहपुर चिलरांव में हुआ था, जिसमें विवादित भूमि पर जबरन कब्जा करने के दौरान पांच लोगों की मौत हो गई थी और लगभग पंद्रह लोग घायल हो गए थे। अजहर ने लर्नड सी. जे. एम./विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, मोतिहारी की अदालत में 16.12.2005 को दायर विरोध याचिका में कहा।

16. बचाव को 1.2.2010, को बंद कर दिया गया था। दो नों पक्षों की दलीलें 19.2.2010 को समाप्त हुईं और अंत में, जाँच रिपोर्ट/प्रतिवेदन 30.07.2010 को प्रस्तुत की गई। बाद में, ज्ञापक संख्या 12214 दिनांक 20.08.2010, द्वारा याचिकाकर्ता को बुलाया गया

कारण बताने के लिए कि 'बिहार पेंशन नियम, 1950 के नियम 43 बी के तहत जांच रिपोर्ट क्यों स्वीकार नहीं की जाए और उसके खिलाफ कार्रवाई क्यों नहीं की जाए।

17. याचिकाकर्ता ने अपना कारण बताने दिनांक 06.09.2010 प्रस्तुत किया लेकिन उसे पक्ष नहीं मिला और एक आदेश/ज्ञापन संख्या 14452 दिनांक 25.09.2010 द्वारा न्यायालय की स्थायी समिति ने 5 प्रतिशत पेंशन की कटौती की सजा देते हुएको पारित किया था। यह भी आदेश दिया गया कि निलंबन की अवधि को इसी तरह माना जाएगा।

18. इसके बाद याचिकाकर्ता ने अपनी पेंशन का 5 प्रतिशत रोकने के आदेश के खिलाफ अपील की प्राथमिकता दी , जिसे ज्ञापन संख्या18567 दिनांक 06.12.2010 के माध्यम से खारिज कर दिया गया था।

19. व्यथित, वर्तमान रिट याचिका।

20. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील, श्री नंद किशोर सिंह प्रस्तुत करते हैं कि अस्पष्ट आरोपों के आधार पर, उपरोक्त निर्णय उत्तरदाताओं द्वारा लिया गया है क्योंकि न तो जिला न्यायाधीश, मोतिहारी के साथ बैठक की तारीख और समय सामने आया और न ही दिए गए फोन नंबर। इसके अलावा, वह तारीख और समय भी जब याचिकाकर्ता ने सी. जे. एम. मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, मोतिहारी से मुलाकात की, को कभी प्रस्तुत नहीं किया गया।

21. निवेदन यह है कि हालांकि मामला भूमि विवाद के इर्द-गिर्द घूमता है, लेकिन यह याचिकाकर्ता के परिवार के भौतिक कब्जे में रहा और ऐसा कोई निष्कर्ष नहीं निकला कि याचिकाकर्ता के परिवार का इस पर अधिकार नहीं था। इसके अलावा, डी. एम., पूर्वी चंपारण के कार्यालय में कोई याचिका लंबित नहीं थी और इसलिए जिला न्यायाधीश, मोतिहारी के माध्यम से उन्हें प्रभावित करने का कोई सवाल ही नहीं था।

22. विद्वान वकील ने आगे प्रस्तुत/समर्पित किया कि शिकायतकर्ता, मो। अजहर, जिसने माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष शिकायत की थी, वह भारतीय दंड संहिता की धारा

147,148,149,307 और 302 के तहत 2005 के तुर्कौलिया थाना मामला संख्या 319 में आरोपी है/था और इलाज के दौरान उसे पुलिस हिरासत में ले लिया गया और इस तरह, वह किसी भी शिकायत को प्राथमिकता नहीं दे सकता था।

23. विद्वान वकील प्रस्तुत /समर्पित करते हैं कि याचिकाकर्ता को पहले आरोपी के रूप में नामित नहीं किया गया था, हालांकि मो। अजहर ने उसे साजिशकर्ता के रूप में फंसाने की कोशिश की, उसे मुकदमे के लिए नहीं भेजा गया। उनका निवेदन है कि उच्च न्यायालय पूर्वाग्रह से ग्रस्त था और इस प्रकार उच्च अधिकारियों द्वारा मनगढ़ंत दस्तावेज/साजिश के आधार पर उन्हें सजा दी गई थी।

24. पहला बिंदु जिस पर याचिकाकर्ता जाने का आदेश चाहता है कि बक्सर के जिला और सत्र न्यायाधीश के रूप में तैनात होने के दौरान, याचिकाकर्ता की सेवाओं को पटना उच्च न्यायालय द्वारा राज्य सरकार को प्रतिनियुक्ति पर सौंप दिया गया था, जब शुरू में उन्हें वर्ष 2001 में बिहार राज्य विधि आयोग के सदस्य सचिव के रूप में नियुक्त किया गया था और उसके बाद, उन्हें ज्ञापन संख्या 7136 दिनांक 05.09.2002 के माध्यम से नवगठित बिहार न्यायिक अधिकारी प्रशिक्षण संस्थान, पटना (अब बिहार न्यायिक अकादमी) के पहले निदेशक के रूप में स्थानांतरित कर दिया गया था। चूंकि उनकी सेवाएं प्रतिनियुक्ति पर राज्य सरकार के अधीन थीं, इसलिए पटना उच्च न्यायालय के पास उन्हें निलंबित करने और/या विभागीय कार्यवाही शुरू करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था।

25. उनके द्वारा सामने रखा गया दूसरा तर्क यह है कि उनके खिलाफ 25.09.2006 को शुरू की गई विभागीय कार्यवाही जारी रही और इस बीच, वे 31.10.2009 को सेवानिवृत्त हो गए, जिसके बाद इसे "नियमों" के नियम 43 (बी) के तहत कार्यवाही में बदल दिया गया।

निवेदन यह है कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष के अभाव में कि विभागीय कार्यवाही में आरोप 'गंभीर कदाचार' या 'सरकार को आर्थिक नुकसान पहुंचाने' से

संबंधित हैं, कार्यवाही आगे नहीं बढ़ सकती थी और इस तरह, उसके बाद पारित कोई भी आदेश दूषित हो जाता है।

26. विद्वान वकील द्वारा आगे यह प्रस्तुत/समर्पित किया गया है कि प्रश्नगत आदेश पारित करते समय, कोई कारण नहीं दिया गया है और इस तरह, यह एक गैर-भाषी आदेश है। आगे निवेदन यह है कि इस संबंध में उनके बचाव पर प्रश्नगत आदेश पारित होने से पहले ध्यान नहीं दिया गया था।

27. 2011 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 4937 में लिया गया अंतिम आधार यह है कि 25.09.2010 दिनांकित दंड आदेश निर्देश देता है कि याचिकाकर्ता के निलंबन की अवधि को इस तरह माना जाए। दूसरे शब्दों में, उसे निलंबन की अवधि के लिए वेतन देने से इनकार कर दिया गया है और इस तरह, आदेश को दर किनार करने लिए उपयुक्त है।

28. जहाँ तक याचिकाकर्ता द्वारा दायर दूसरे मामले (2011 का सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 4749) का संबंध है, यह विद्वान वकील का तर्क है कि उसे दिनांकित अधिसूचना 23.06.2006 के माध्यम से दिया गया सुपर टाइम स्केल, जिसे दिनांकित 10.07.2006 के आदेश द्वारा वापस लिया गया था, खराब है क्योंकि उसे बिना कोई अवसर दिए पारित किया गया था।

29. दूसरी ओर, पटना उच्च न्यायालय की ओर से पेश हुए विद्वान वकील श्री पीयूष लाल ने इस न्यायालय को जांच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत/समर्पित जांच रिपोर्ट में ले गए हैं। उनके अनुसार, मोहम्मद अजहर की शिकायत पर माननीय मुख्य न्यायाधीश को संबोधित करते हुए जिला और सत्र न्यायाधीश, मोतिहारी से एक रिपोर्ट मांगी थी। रिपोर्ट के अनुसार प्रस्तुत/समर्पित करते हुए, याचिकाकर्ता ने उनसे उनके आवास पर तीन बार मुलाकात की और उन पर आपराधिक मामले में उनकी मदद करने और जिला मजिस्ट्रेट, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी पर उक्त प्राधिकारी के समक्ष लंबित विवादित भूमि के 75 बीघा से संबंधित अनुकूल आदेश पारित करने के लिए दबाव डाला।

30. वह प्रस्तुत/समर्पित करता है कि उक्त रिपोर्ट के आधार पर, उसके खिलाफ कार्यवाही शुरू की गई थी, उसे आरोप और बाद में दस्तावेजों की सूची और गवाहों के नाम भी दिए गए थे जिन पर प्रस्तुतकर्ता अधिकारी भरोसा करना चाहते थे। आगे की दलील यह है कि तीन गवाहों से पूछताछ की गई जिसमें शिकायतकर्ता मो. अजहर, जिला न्यायाधीश, मोतिहारी के साथ-साथ जिला मजिस्ट्रेट, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी भी।

31. विद्वान वकील प्रस्तुत/समर्पित करते हैं कि जिला न्यायाधीश, मोतिहारी ने अपनी परीक्षा में सूचित किया कि 16.02.2006 पर, उन्हें पटना उच्च न्यायालय से पत्र प्राप्त हुआ जिसमें मोहम्मद अजहर की शिकायत थी और उसका जवाब मांगा गया था। तदनुसार उन्होंने 22.02.2016 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत/समर्पित की (प्रदर्श-पी/1 के रूप में चिह्नित)। बाद में, जिला न्यायाधीश से याचिकाकर्ता द्वारा जिरह की गई और पूछताछ अधिकारी की रिपोर्ट के अनुसार, हालांकि उन्हें बदनाम करने के लिए कई सवाल पूछे गए थे, याचिकाकर्ता ने जिला न्यायाधीश के साथ अपनी बैठक पर एक भी सवाल नहीं पूछा। इसके बजाय, उन्होंने जिला न्यायाधीश पर आरोप लगाने की कोशिश की कि उन्होंने उन्हें फंसाने की साजिश के तहत उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों और वरिष्ठ अधिवक्ताओं के साथ सांठगांठ की है।

32. श्री पीयूष लाल ने आगे कहा कि दूसरा गवाह, मो. शिकायतकर्ता अजहर ने कहा कि याचिकाकर्ता उच्च पद पर न्यायिक अधिकारी होने के कारण उन्हें माननीय मुख्य न्यायाधीश को याचिका भेजने के लिए मजबूर किया गया था। विद्वान वकील के अनुसार, पूछताछ अधिकारी की रिपोर्ट के अवलोकन से पता चलता है कि याचिकाकर्ता ने मोहम्मद अजहर से 180 से अधिक प्रश्न पूछे ने जिरह के दौरान स्पष्ट रूप से दिखाया कि उनके इस दावे के विपरीत कि उनका भूमि से कोई लेना-देना नहीं था, याचिकाकर्ता को विवादित भूमि की गहरी समझ थी।

33. विद्वान वकील ने आगे कहा कि जिला मजिस्ट्रेट, पूर्वी चंपारण पूछताछ किए जाने वाले तीसरे गवाह थे और उनके अनुसार, उनके पक्ष में कई आदेश पारित होने के बावजूद, क्योंकि याचिकाकर्ता का परिवार भूमि पर कब्जा करने में विफल रहा था, उनके भाई लोकनाथ शर्मा ने

जिला मजिस्ट्रेट, मोतिहारी के समक्ष याचिका दायर कर मजिस्ट्रेट/पुलिस कर्मियों की तैनाती का अनुरोध किया ताकि वह भूमि पर खेती कर सकें। इस प्रकार जिला मजिस्ट्रेट, मोतिहारी के कार्यालय में याचिका की उपस्थिति से याचिकाकर्ता द्वारा इनकार नहीं किया जा सकता है। जिला मजिस्ट्रेट से जिरह की गई और। बाद में वापस बुला लिया गया और मूल फाइलों को जांच अधिकारी द्वारा देखा गया। दस्तावेजों का सामना करते हुए, याचिकाकर्ता ने कथित रूप से अपने भाई द्वारा भेजे गए दस्तावेजों की प्रामाणिकता पर संदेह करने की कोशिश की, लेकिन उन दस्तावेजों के प्रमाण में जिला मजिस्ट्रेट, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी के बयान को हिलाया नहीं जा सका।

34. विद्वान वकील प्रस्तुत/समर्पित करते हैं कि उपरोक्त शिकायत में याचिकाकर्ता की संलिप्तता के बारे में पूरी तरह से संतुष्ट होने के बाद, पूछताछ अधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि याचिकाकर्ता का परिवार विवादित भूमि पर कब्जा करना चाहता था और इस प्रक्रिया में, जिला मजिस्ट्रेट पर दबाव डालना चाहता था। अंततः उन्होंने अपने दम पर भूमि पर कब्जा करने की कोशिश की, जिसके परिणामस्वरूप पांच निर्दोष लोगों की हत्या कर दी गई।

35. उन्होंने प्रस्तुत/समर्पित किया कि पूछताछ अधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि याचिकाकर्ता ने भूमि विवाद में मदद के लिए तत्कालीन जिला न्यायाधीश, मोतिहारी से संपर्क किया। इस प्रकार उन्होंने देखा कि एक पारिवारिक विवाद जिसमें उनके निकटतम भाई शामिल हैं/थे और जिसमें वे स्वयं शामिल हैं, के बीच अंतर है। इस प्रक्रिया में, अधिकारी अपने पद की प्रतिष्ठा को बनाए रखने में विफल रहे।

36. विद्वान वकील प्रस्तुत/समर्पित करते हैं कि उपरोक्त परिस्थितियों में, याचिकाकर्ता को आरोपों का दोषी पाया गया और उसकी पेंशन का 5 प्रतिशत काटने का निर्णय लिया गया। यही बात पूरी तरह से उचित है। वह आगे प्रस्तुत/समर्पित करता है कि निर्णय ज्ञापन सं. 6643-47 दिनांकित 11.07.2006 जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को दिए गए सुपर टाइम वेतनमान को पहले वापस लिया गया था, भी उचित है।

37. जहाँ तक याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा यह तर्क दिया गया है कि पटना उच्च न्यायालय को उनके खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू करने और/या इस तथ्य के मद्देनजर कोई आदेश पारित करने का अधिकार नहीं था कि वे राज्य सरकार में प्रतिनियुक्ति पर थे, यह श्री पीयूष लाल का तर्क है कि पहले उन्हें 10.07.2006 को निलंबित कर दिया गया था और विभागीय कार्यवाही 25.09.2006 को शुरू की गई थी। इसे 2007 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 5500 में चुनौती दी गई जिसमें याचिकाकर्ता ने क्षेत्राधिकार की कमी का आधार भी लिया था क्योंकि उसने पटना उच्च न्यायालय द्वारा उसके प्रशासनिक पक्ष से विभागीय कार्यवाही के आरंभ और निलंबन पर सवाल उठाया था।

38. उक्त 2007 का सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 5500 को 30.04.2008 को अनुमति दी गई थी, विभागीय कार्यवाही के निलंबन और प्रारंभ के आदेश को रद्द कर दिया गया था और आदेशों को रद्द करने के लिए सौंपे गए कारणों में से एक यह था कि मामले में, पटना उच्च न्यायालय उन्हें निलंबित करने का इच्छुक था, उसके लिए पहले उनकी प्रतिनियुक्ति को रद्द करना, उनकी सेवाओं को वापस लेना और फिर उन्हें निलंबित करना और/या भारत के संविधान के अनुच्छेद 236 (बी) के साथ पठित अनुच्छेद 235 के तहत निहित नियंत्रण की शक्ति के आधार पर विभागीय कार्यवाही शुरू करना उचित होता और अन्यथा नहीं।

39. उन्होंने समर्पित किया कि 30.04.2008 दिनांकित आदेश को पटना उच्च न्यायालय द्वारा 2008 का SLP (C)/ एस.एल. पी. (सी) 22890 में चुनौती दी गई थी, जिसे 2008 के SLP (C) 12618 के साथ 19.09.2008 को लिया गया था और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 19.09.2008 को अंतरिम रोक लगाने के लिए इच्छुक था, जिसे 03.10.2008 को पूर्ण कर दिया गया था, जब दो एस.एल.पी. को याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय कार्यवाही को चार सप्ताह की अवधि के भीतर समाप्त करने का निर्देश देने के लिए निपटाया गया था और तब तक उन्हें निलंबन के तहत रहने का निर्देश दिया गया था।

40. इस प्रकार, वे प्रस्तुत/समर्पित करते हैं कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने याचिकाकर्ता के खिलाफ पूर्ण रोक लगाते हुए पटना उच्च न्यायालय को विभागीय कार्यवाही करने और समाप्त करने की अनुमति दी, उनके द्वारा लिए गए इस रुख को फिर से खारिज करना होगा।

41. उनका आगे का तर्क यह है कि गुण-दोष के आधार पर भी, पटना उच्च न्यायालय का के अपने न्यायिक अधिकारियों पर पूर्ण नियंत्रण साथ ही। भारत के संविधान के अनुच्छेद 235 के तहत निहित शक्ति के तहत निलंबित करने, विभागीय कार्यवाही शुरू करने और/या सजा देने की शक्ति और प्राधिकारी (माननीय राज्यपाल) की नियुक्ति की शक्ति सहित अधिकारी बर्खास्तगी/हटाने/रैंक में कमी के आदेश जारी करने तक सीमित हैं और वह भी उच्च न्यायालय की सिफारिश पर जो उन पर बाध्यकारी है। उनका तर्क है कि नियंत्रण सौंपने का उद्देश्य न्यायपालिका की स्वतंत्रता को बनाए रखना है जो संविधान की मूल संरचना है।

42. इस प्रकार, पटना उच्च न्यायालय को याचिकाकर्ता को निलंबित करने और उसके खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू करने का अधिकार था, भले ही वह प्रतिनियुक्ति पर हो। उन्हें बिहार विधि आयोग या बिहार अधिकारी प्रशिक्षण संस्थान में प्रतिनियुक्ति पर रखते समय, भारत के संविधान के अनुच्छेद 235 के तहत पटना उच्च न्यायालय के पास निहित नियंत्रण उसके पास बना रहा क्योंकि याचिकाकर्ता प्रतिनियुक्ति पर भी बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा के सदस्य बने रहे जो जिला और सत्र न्यायाधीश के पद पर रहे।

43. विद्वान वकील प्रस्तुत/ समर्पित करते हैं कि उपरोक्त संवैधानिक प्रावधान भारत के संविधान के लागू होने से पहले भी मौजूद था, पटना उच्च न्यायालय नियम, 1916 के नियम-3 (vii) अध्याय 1, भाग-1 के अनुसार जो स्थायी समिति को। उच्च न्यायिक सेवा के अधिकारियों के निलंबन और विभागीय कार्यवाही शुरू करने के आदेश पारित करने के लिए अधिकृत करती हैं। यह उनका तर्क है कि याचिकाकर्ता ने पटना उच्च न्यायालय द्वारा उनके खिलाफ विभागीय कार्यवाही के निलंबन और शुरुआत पर सवाल उठाते हुए किसी भी ऐसे प्रावधान की ओर इशारा

नहीं किया है जो राज्य सरकार को न्यायिक अधिकारियों, विशेष रूप से उच्च न्यायिक सेवा के अधिकारियों, जो राज्य सरकार में प्रतिनियुक्ति पर हैं, के खिलाफ विभागीय कार्यवाही को निलंबित करने या शुरू करने के लिए अधिकृत करता है। वह प्रस्तुत करता है कि उपरोक्त पृष्ठभूमि में, याचिकाकर्ता द्वारा उठाया गया तर्क खारिज किए जाने के योग्य है।

44. जहाँ तक याचिकाकर्ता द्वारा लिया गया दूसरा आधार है कि गंभीर कदाचार को शामिल करने या सरकार को आर्थिक नुकसान पहुँचाने के अभाव में, बिहार पेंशन नियमों के नियम 43 (बी) के तहत कार्यवाही को परिवर्तित नहीं किया जा सकता था, यह पटना उच्च न्यायालय के विद्वान वकील का तर्क है कि यह पहले ही शंभू शरण में पटना उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा **शंभू शरण बनाम बिहार राज्य और अन्य में सूचित 2001 (1) पी. एल. जे. आर. 665 में**। कि सेवा में रहते हुए शुरू की गई विभागीय कार्यवाही सेवानिवृत्ति पर जारी रह सकती है जिसके लिए बिहार पेंशन नियमों के नियम 43 (बी) के तहत कोई अलग आदेश दर्ज नहीं किया जाएगा। याचिकाकर्ता के सेवा में रहने के दौरान शुरू की गई विभागीय कार्यवाही के स्वतः जारी रहने के कारण, एक बार जब वह 31.10.2009 को सेवानिवृत्त हो गए, तो निष्कर्ष दर्ज करने की कोई आवश्यकता नहीं थी और चूंकि याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय कार्यवाही में आरोप गंभीर कदाचार के थे, इसलिए बिहार पेंशन नियमों के नियम 43 (बी) के तहत कार्यवाही जारी रखनी पड़ी।

45. याचिकाकर्ता के इस तर्क के बारे में कि सरकार को गंभीर कदाचार और/या आर्थिक नुकसान दर्ज नहीं किया गया है और/या कोई कारण नहीं सौंपा गया है, प्रश्नगत आदेश में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता है, श्री पीयूष लाल प्रस्तुत करते हैं कि याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोप विभागीय कार्यवाही में साबित हुए हैं, यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि याचिकाकर्ता ने उस पद का दुरुपयोग किया जो वह धारण कर रहा था और इस प्रकार यह गंभीर कदाचार का मामला था और केवल शब्द का अभाव मामले में हस्तक्षेप करने का आधार

नहीं हो सकता है। उक्त आरोपों को स्वीकार करना गंभीर दुराचार के बराबर नहीं है ताकि 'नियमों' के नियम 43 (बी) के तहत सजा दी जा सके।

46. वह आगे प्रस्तुत/समर्पित करता है कि जब कोई अनुशासनात्मक प्राधिकारी जांच अधिकारी के निष्कर्ष को स्वीकार कर लेता है, तो उसे साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने की आवश्यकता नहीं होती है और इसकी आवश्यकता केवल तभी होती है जब अनुशासनात्मक प्राधिकारी जांच अधिकारी की रिपोर्ट से भिन्न होता है।

47. जहाँ तक याचिकाकर्ता का दावा है कि उसे निलंबन अवधि के लिए अपना पूरा वेतन नहीं दिया गया है, पटना उच्च न्यायालय के विद्वान वकील ने प्रस्तुत/समर्पित किया कि उसके खिलाफ लगाए गए आरोप पर विचार करते हुए जो साबित हुआ, वह पूरे वेतन का हकदार नहीं था। यह उनका आगे का निवेदन है कि याचिकाकर्ता के निलंबन आदेश को पहले पटना उच्च न्यायालय द्वारा 2007 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 5500 में 30.04.2008 को रद्द कर दिया गया था। तदनुसार, उनके निलंबन आदेश को निरस्त कर दिया गया और उन्हें प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, कटिहार के रूप में तैनात/पदस्थापित किया गया।

48. हालाँकि, पटना उच्च न्यायालय द्वारा दायर 2008 के एसएलपी (सी) 23747 और एसएलपी (सी) 22890 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने03.10.2008 को एसएलपी पर पूर्ण रोक लगाते हुए और उनका निपटारा करते हुए,विभागीय कार्यवाही को समाप्त करने और तब तक याचिकाकर्ता को निलंबन के तहत रखने का निर्देश दिया गया था जिसके बाद उसे फिर से 15.10.2008 को निलंबित कर दिया गया था। याचिकाकर्ता 31.10.2009 को सेवानिवृत्त हुआ, जबकि अभी भी उक्त निलंबन के तहत था, जो निलंबन प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय के पद से था; प्रतिनियुक्ति पद से नहीं।

49. निवेदन यह है कि एक बार जब पटना उच्च न्यायालय ने उनके खिलाफ आरोपों को सही पाया और उन्हें दोषी ठहराया गया, तो सजा का आदेश पारित किया गया। चूंकि

याचिकाकर्ता को आरोपों से बरी नहीं किया गया था, इसलिए वह अपने निलंबन की अवधि के दौरान पूरे वेतन का हकदार नहीं है।

50. पुनः जहाँ तक याचिकाकर्ता द्वारा 2011 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 4749 में यह तर्क दिया गया है कि उन्हें दिए गए सुपर टाइम स्केल को पटना उच्च न्यायालय द्वारा वापस नहीं लिया जा सकता था, श्री पीयूष लाल प्रस्तुत करते हैं कि इसे सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 13586 में सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 13586 में सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 2 के साथ अलग रखा गया था।

51. इसे पटना उच्च न्यायालय द्वारा एस. एल. पी. में चुनौती दी गई थी और जैसा कि ऊपर कहा गया है, उन्हें अनुमति दी गई थी और 19.09.2008 को अंतरिम रोक का अनुदान 03.10.2008 को पूर्ण कर दिया गया था। वे प्रस्तुत करते हैं कि जब माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 03.10.2008 को दिनांकित 10.06.2006 के सुपर टाइम स्केल को वापस लिए जाने को दरकिनार कर दिया गया था, तो यह अंतिम हो गया और इस तरह, याचिकाकर्ता अब सुपर टाइम स्केल के अनुदान के लिए दावा नहीं कर सकते। वे प्रस्तुत/समर्पित करते हैं कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पटना उच्च न्यायालय के दोनों एस. एल. पी. को अनुमति देने के बाद, दिनांकित 10.07.2006 के वापस लिए जाने के आदेश को रद्द करने की प्रार्थना अवमानना है, कम से कम कहने के लिए।

52. विद्वान वकील ने अपनी दलील का समापन करते हुए कहा कि दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में, याचिकाकर्ता को कोई राहत नहीं दी जा सकती है और रिट याचिकाएं खारिज किए जाने के लिए उपयुक्त हैं।

53. हमने मामले के तथ्यों, रिकॉर्ड /अभिलेख पर सामग्री के साथ-साथ संबंधित पक्षों द्वारा प्रस्तुत प्रस्तुतियों को देखा है।

54. जो तस्वीर सामने आती है वह इस प्रकार हैः-

(i) एक मो. अजहर ने याचिकाकर्ता के खिलाफ माननीय मुख्य न्यायाधीश को एक शिकायत भेजी जिसमें आरोप लगाया गया कि याचिकाकर्ता आधिकारिक पद का उपयोग कर रहा है और न्यायिक अधिकारियों पर एक विवादित भूमि के संबंध में जिला प्रशासन/पुलिस अधिकारियों पर दबाव बनाने के लिए दबाव डाल रहा है, जिसके परिणामस्वरूप अंततः पांच लोगों की हत्या हो गई और 2005 का तुर्कौलिया थाना मामला संख्या 318 दर्ज किया गया।

(ii) पटना उच्च न्यायालय ने शिकायत प्राप्त होने पर पत्र संख्या 200 दिनांक 16.02.2006 के माध्यम से जिला और सत्र न्यायाधीश, मोतिहारी से रिपोर्ट मांगी।

(iii) जिला न्यायाधीश, मोतिहारी ने इसके बाद पत्र संख्या 35 दिनांक 22.02.2006 के माध्यम से अपनी रिपोर्ट भेजी,जिसमे कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने उनसे उनके आधिकारिक आवास पर तीन बार मुलाकात की और भूमि विवाद मामले में उनकी मदद करने के लिए टेलीफोन पर अनुरोध भी किया। याचिकाकर्ता जिला मजिस्ट्रेट, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी से विवादित भूमि से संबंधित एक अनुकूल आदेश पारित करने के लिए कहना चाहता था।

(iv) इस बीच, उक्त अवधि के दौरान अधिसूचना सं. 233ए दिनांक 23.02.2006, याचिकाकर्ता को चयन ग्रेड स्केल प्रभावी 01.09.2003 प्रदान किया गया था;

(v) इसके बाद स्थायी समिति ने अपनी दिनांक 06.07.2006 की बैठक में जिला और सत्र न्यायाधीश, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी की रिपोर्ट के साथ-साथ पटना न्यायाधीश पद के माननीय निरीक्षण न्यायाधीश के कार्यवृत्त पर भी विचार किया, जो 2005 के तुर्कौलिया थाना मामला संख्या 318 में उनकी भागीदारी से संबंधित था। एक निर्णय लिया गया जो इस प्रकार हैः

"अभिलेख पर उचित विचार-विमर्श और सामग्री पर विचार करने पर, यह संकल्प लिया जाता है कि न्यायिक अधिकारी प्रशिक्षण संस्थान के निदेशक श्री विकास कुमार शर्मा को तत्काल प्रभाव से निलंबित कर दिया जाए। आगे उसके खिलाफ विभागीय

कार्यवाही शुरू करने का संकल्प लिया जाता है। विभागीय कार्यवाही के जारी रहने के दौरान श्री शर्मा का मुख्यालय दीवानी अदालतों में होंगे। "

(vi) इसे आगे एजेंडा नं. 1, चयन ग्रेड स्केल के अनुदान से संबंधित स्थायी समिति की कार्यवाही दिनांक 20.06.2006 की पुष्टि से संबंधित मामले पर विचार किया और निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया गयाः

"यह संकल्प लिया गया है कि 20 जून, 2006 की स्थायी समिति की बैठक के कार्यवृत्त की पुष्टि इस संशोधन के साथ की जाए कि उस बैठक के एजेंडा संख्या 2 के क्रम संख्या 7 श्री विकास कुमार शर्मा का नाम वेतन के सुपर टाइम स्केल दिए गए अधिकारियों की सूची से वापस लिया जाए। "

(vii) याचिकाकर्ता ने 2006 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 13586 में पटना उच्च न्यायालय के फैसले को सफलतापूर्वक चुनौती दी। (*ज्ञापन सं. 6643-47 याद करने से संबंधित दिनांक 11.07.2006 सुपर टाइम स्केल का अनुदान*) और साथ ही 2007 का सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 5500 (*अधिसूचना/ज्ञापन संख्या 6631-33 दिनांक 10.07.2006 को चुनौती देते हुए और ज्ञापन संख्या। 9925 दिनांक 25.09.2006 जिसके द्वारा उन्हें निलंबन और विभागीय कार्यवाही के तहत रखा गया था उनके खिलाफ शुरू किया गया*) और इसे माननीय पटना उच्च न्यायालय द्वारा 30.04.2008 को रद्द कर दिया गया।

55. इसके बाद, प्रशासनिक पक्ष पर, स्थायी समिति ने अपनी दिनांक 20.05.2008 की बैठक में पटना उच्च न्यायालय का आदेश पालन किया जो अपील के अधीन है जिसे वह प्राथमिकता देना चाहता था। तदनुसार, याचिकाकर्ता का निलंबन रद्द कर दिया गया और उसकी विभागीय कार्यवाही को हटा दिया गया।

56. इसके बाद उच्च न्यायालय ने अपने प्रशासनिक पक्ष में 2008 के एसएलपी (सी) संख्या 12618 और 22890 के माध्यम से दो आदेशों को चुनौती दी, जिसकी सुनवाई पहले माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 19.09.2008 को की गई थी और याचिकाकर्ता को नोटिस पर

रखते हुए अंतरिम रोक लगा दी गई थी। इसके बाद, 03.10.2008 के आदेश को पूर्ण बना दिया गया और दोनों अपीलों का निपटारा उच्च न्यायालय को एक विशेष समय के भीतर अनुशासनात्मक कार्यवाही पूरी करने के निर्देश के साथ किया गया और तब तक यह आदेश दिया गया कि वे निलंबन के तहत रहेंगे।

57. तदनुसार, याचिकाकर्ता को फिर से निलंबित कर दिया गया और 15.10.2008 दिनांकित एक आदेश के माध्यम से विभागीय कार्यवाही शुरू की गई। चूंकि विभागीय कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, याचिकाकर्ता 30.10.2009 को सेवा से सेवानिवृत्त हुआ, 10.11.2009 को स्थायी समिति ने 'नियमों' के नियम 43 (बी) के तहत उसके खिलाफ विभागीय कार्यवाही जारी रखने का संकल्प लिया, जिसे ज्ञापन संख्या 17602 दिनांक 16.11.2009 के माध्यम से अधिसूचित किया गया था।

58. विभागीय कार्यवाही समाप्त होने और जांच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत/समर्पित जांच रिपोर्ट के बाद, 10.08.2010 को स्थायी समिति ने कार्यालय पत्र संख्या 12214 दिनांक 20.08.2010 में शामिल निर्णय याचिकाकर्ता को निम्नलिखित शर्तों में जारी /निर्गत किया गयाः

> *"कि रजिस्ट्री जांच रिपोर्ट की एक प्रति अपराधी श्री विकास कुमार शर्मा को प्रस्तुत करेगी ताकि उन्हें कारण बताए कि जांच रिपोर्ट को क्यों स्वीकार नहीं किया जाता है और बिहार पेंशन नियम, 1950 के नियम 43 (बी) के तहत उनके खिलाफ कार्रवाई क्यों नहीं की जाती है। "*

59. याचिकाकर्ता ने अपना जवाब प्रस्तुत/ समर्पित किया, जिसके बाद, स्थायी समिति ने अपनी दिनांक 21.09.2010 की बैठक में निम्नानुसार समाधान कियाः

> *"श्री विकास कुमार शर्मा, तत्कालीन निदेशक, B.J.O.T.I. /बी. जे. ओ. टी. आई. पटना (सेवानिवृत्त होने के बाद से) द्वारा प्रस्तुत कारणदर्शक/कारण बताओ नोटिस की जांच कार्यवाही और जवाब पर विचार करने के बाद यह संकल्प लिया गया है कि बिहार पेंशन नियम, 1950 के नियम 43 (बी) द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए, श्री*

विकास शर्मा की पेंशन का 5 प्रतिशत रोक दिया जाए। निलंबन की अवधि को इस तरह माना जाएगा। "

60. इसके बाद आदेश/ज्ञापन सं. 14452 दिनांक 25.09.2010 ने 'नियमों' के नियम 43 (बी) के तहत पांच प्रतिशत पेंशन को रोकने के दंड का आदेश दिया और साथ ही निलंबन अवधि को भी इस रूप में माना जाना चाहिए। व्यक्ति पीड़ित, याचिकाकर्ता ने अपील की प्राथमिकता जिसे ज्ञापन संख्या 18567 दिनांक 06.12.2010 के माध्यम से खारिज कर दिया गया। जो रिट याचिकाओं का अनुसरण करता था।

61. षड्यंत्र सिद्धांत के मुद्दे पर, यह न्यायालय याचिकाकर्ता के विद्वान वकील की इस दलील को खारिज कर देता है कि तत्कालीन जिला न्यायाधीश, मोतिहारी ने उनके खिलाफ साजिश रची थी और पक्षपातपूर्ण रिपोर्ट प्रस्तुत की थी जो विभागीय कार्यवाही शुरू करने का आधार बनी थी। जाँच अधिकारी ने रिपोर्ट में दर्ज किया है कि याचिकाकर्ता ने जिला न्यायाधीश, मोतिहारी से जिरह की और उनसे कई सवाल पूछे गए लेकिन एक बार भी उन्होंने जिला न्यायाधीश के आधिकारिक आवास पर अपनी यात्रा के बारे में एक भी सवाल नहीं पूछा और उस पृष्ठभूमि में, रिपोर्ट को पक्षपातपूर्ण/ पूर्वाग्रहस ग्रस्त होना नहीं कहा जा सकता है।

62. पुनः जहाँ तक याचिकाकर्ता का दावा है कि उसका विचाराधीन भूमि से कोई लेना-देना नहीं है, पूछताछ अधिकारी ने दर्ज किया है कि लगभग 180 प्रश्न मोहम्मद अजहर से पूछे गए थे। शिकायतकर्ता द्वारा भूमि प्रश्नगत अजहर, जिसके कारण वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि याचिकाकर्ता को विवादित भूमि की पूरी जानकारी थी। वास्तव में, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी के जिला मजिस्ट्रेट ने भी विभागीय कार्यवाही के दौरान स्वीकार किया कि उन्होंने इस विषय पर बिहार पटना के मुख्य सचिव को एक रिपोर्ट सौंपी थी।

63. उनके खिलाफ कार्यवाही में अधिकार क्षेत्र की कमी के मुद्दे पर क्योंकि वह राज्य सरकार के साथ प्रतिनियुक्ति के तहत थे और प्रासंगिक समय में बिहार अधिकारी प्रशिक्षण

संस्थान के निदेशक के रूप में कार्यरत थे, पटना उच्च न्यायालय के विद्वान वकील ने पूरी तरह से यही समझाया है जैसे किः-

(i) उक्त तर्क पहले 2007 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 5500 में उठाया गया था और माननीय उच्च न्यायालय ने पैराग्राफ-12 में 30.04.2008 को याचिका को स्वीकार करते हुए इस तथ्य पर ध्यान दिया था कि अधिकारी पहले उनकी प्रतिनियुक्ति को रद्द करने, उनकी सेवा को वापस लेने के लिए कर्तव्यबद्ध थे और तभी उन्हें निलंबन के तहत रखा जा सकता था और/या विभागीय कार्यवाही भारत के संविधान के अनुच्छेद 236 (बी) के साथ पठित अनुच्छेद 235 के तहत निहित शक्ति के आधार पर शुरू की जा सकती थी और अन्यथा नहीं।

(ii) इसे पटना उच्च न्यायालय ने अपने प्रशासनिक पक्ष से 2008 के एसएलपी (सी) 22890 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी थी, जिसमें न केवल यह सफल हुआ, बल्कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विभागीय कार्यवाही करने का निर्देश दिया और तब तक याचिकाकर्ता को निलंबन के तहत रखने का निर्देश दिया गया था। इस प्रकार, उक्त विवाद को दरकिनार कर दिया गया है। शीर्ष न्यायालय, याचिकाकर्ता को उक्त आधार उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

(iii) पश्चिम बंगाल राज्य और एक अन्य बनाम नृपेंद्र नाथ बागची के मामले में ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 447 में बताया कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराग्राफ 13 और 14 में निम्नलिखित पढ़ा हैः

> *"13. हम इस निर्माण को स्वीकार नहीं करते हैं। 'नियंत्रण' शब्द को संविधान में बिल्कुल भी परिभाषित नहीं किया गया है। संघ और राज्यों के अधीन सेवाओं से संबंधित भाग XIV में "अनुशासनात्मक नियंत्रण" या "अनुशासनात्मक क्षेत्राधिकार" शब्दों का बिल्कुल भी उपयोग नहीं किया गया है। यह नहीं सोचा जाना चाहिए कि सेवाओं के अनुशासनात्मक अधिकार क्षेत्र पर विचार नहीं किया गया है। इस संदर्भ में हमारे निर्णय में "नियंत्रण" शब्द में अनुशासनात्मक अधिकार क्षेत्र शामिल होना चाहिए। वास्तव में,*

इस शब्द का उपयोग कला के एक शब्द के रूप में किया जा सकता है क्योंकि सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील), नियमों में "नियंत्रण" शब्द का उपयोग किया जाता है और केवल वे नियम जो वैध रूप से "नियंत्रण" शब्द के तहत आ सकते हैं वे अनुशासनात्मक नियम हैं। इसके अलावा, जैसा कि हम पहले ही दिखा चुके हैं, इन अनुच्छेदों के अधिनियमन के पीछे का इतिहास इंगित करता है कि "अधीनस्थ न्यायपालिका की स्वतंत्रता को सुनिश्चित करने के उद्देश्य को प्रभावी बनाने के लिए नियंत्रण उच्च न्यायालय में निहित था और जब तक कि इसमें अनुशासनात्मक नियंत्रण के साथ-साथ उद्देश्य में भी निराशा होगी। निर्माण के लिए यह सहायता स्वीकार्य है क्योंकि किसी कानून के अर्थ का पता लगाने के लिए, वैध रूप से कानून की पूर्व स्थिति, बुराई को हटाने की मांग और उस प्रक्रिया का सहारा लिया जा सकता है जिसके द्वारा कानून विकसित किया गया था। जैसा कि हमने देखा है, "नियंत्रण" शब्द का उपयोग संविधान में पहली बार किया गया था और इसके साथ "बनियान" शब्द है जो एक मजबूत शब्द है। यह दर्शाता है कि उच्च न्यायालय को न्यायपालिका पर नियंत्रण का एकमात्र संरक्षक बनाया गया है। नियंत्रण, इसलिए, केवल न्यायालय के दिन-प्रतिदिन के कामकाज की व्यवस्था करने की शक्ति नहीं है, बल्कि पीठासीन न्यायाधीश पर अनुशासनात्मक अधिकार क्षेत्र पर विचार करता है। अनुच्छेद 227 उच्च न्यायालय को इन न्यायालयों पर अधीक्षण प्रदान करता है और उच्च न्यायालय को विवरणी आदि के लिए बुलाने में सक्षम बनाता है। अनुच्छेद 235 में "नियंत्रण" शब्द की सामग्री अलग होनी चाहिए। अनुच्छेद 235 में निश्चित रूप से अलग प्रावधान है। इसमें सिर्फ अधीक्षण के अलावा कुछ और भी शामिल है। यह न्यायाधीशों के आचरण और अनुशासन पर नियंत्रण है। एक ही दिशा में स्पष्ट रूप से इशारा करने वाले दो अन्य संकेतों से यह निष्कर्ष और मजबूत होता है। पहला यह है कि उच्च न्यायालय का आदेश एक अपील के अधीन किया जाता है यदि ऐसा सेवा की शर्तों को विनियमित करने वाले कानून में प्रदान

किया गया है और यह आवश्यक रूप से अनुशासनात्मक अधिकार क्षेत्र में पारित आदेश को इंगित करता है। दूसरा, शब्द यह है कि उच्च न्यायालय न्यायाधीश के साथ उनके सेवा नियमों के अनुसार "व्यवहार" करेगा और "सौदा" शब्द भी अनुशासनात्मक की ओर इशारा करता है न कि केवल प्रशासनिक अधिकार क्षेत्र की ओर।

(14) अनुच्छेद 233 और 235 में दो अलग-अलग शक्तियों का उल्लेख है। पहला है व्यक्तियों की नियुक्ति, उनकी तैनाती और पदोन्नति की शक्ति और दूसरा है नियंत्रण की शक्ति। जिला न्यायाधीशों के मामले में, व्यक्तियों की नियुक्ति और नियुक्ति और पदोन्नति राज्यपाल द्वारा की जानी है, लेकिन जिला न्यायाधीश पर नियंत्रण उच्च न्यायालय का है। हम इस तर्क से प्रभावित नहीं हैं कि इस्तेमाल किया गया शब्द "जिला अदालत" है क्योंकि बाकी लेख स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि "अदालत" शब्द का उपयोग न केवल उचित अदालत बल्कि पीठासीन न्यायाधीश को भी दर्शाने के लिए किया जाता है। अनुच्छेद 235 का अंतिम भाग उस व्यक्ति के बारे में बताता है जो पद धारण करता है। जिला न्यायाधीश के अधीनस्थ न्यायिक सेवा के मामले में नियुक्ति राज्यपाल द्वारा राज्य लोक सेवा आयोग और उच्च न्यायालय के परामर्श के बाद बनाए जाने वाले नियमों के अनुसार की जानी है, लेकिन नियुक्ति, पदोन्नति और छुट्टी देने की शक्ति और अदालतों का नियंत्रण उच्च न्यायालय में निहित है। निहित क्या है में अनुशासनात्मक अधिकार क्षेत्र शामिल है। नियंत्रण बेकार है यदि यह अनुशासनात्मक शक्तियों के साथ नहीं है। यह उम्मीद नहीं की जानी चाहिए कि उच्च न्यायालय अनुशासनहीनता के हर मामले में सरकार या राज्यपाल के पास जाएगा, चाहे वह कितना भी छोटा क्यों न हो और जिसके लिए बर्खास्तगी या हटाने की सजा की भी आवश्यकता नहीं हो सकती है।

इन अनुच्छेदों से पता चलता है कि उच्च न्यायालय को "नियंत्रण" सौंपने से अधीनस्थ न्यायपालिका की स्वतंत्रता को ध्यान में रखा गया था। यह आंशिक रूप से भारत सरकार

अधिनियम, 1935 में प्राप्त किया गया था, लेकिन इसे वर्तमान संविधान के प्रारूपकों द्वारा पूरी तरह से लागू किया गया था। यह निर्माण संविधान के अनुच्छेद 50 के निदेशक सिद्धांतों के अनुरूप भी है जिसमें कहा गया हैः

50. राज्य की लोक सेवाओं में न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग करने के लिए राज्य कदम उठाएगा।

64. इस प्रकार हम उच्च न्यायालय के विद्वान वकील द्वारा प्रस्तुत प्रस्तुतियों से आश्वस्त हैं और याचिकाकर्ता द्वारा इस बिंदु पर की गई आपत्ति को अस्वीकार करते हैं। हम यह भी देखते हैं कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश पर उनका निलंबन न्यायिक पद, यानी प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय से था। इसके अलावा आरोप न्यायिक प्रशिक्षण संस्थान में उनके आचरण या कर्तव्यों के निर्वहन के बारे में नहीं था। आरोप जिला प्रशासन की सहायता प्राप्त करने के लिए एक न्यायिक अधिकारी के अपने प्रतिष्ठित कार्यालय का उपयोग करना; उस जिले के जिला और सत्र न्यायाधीश के माध्यम से विशुद्ध रूप से व्यक्तिगत मामले को आगे बढ़ाने के लिए।

65. याचिकाकर्ता द्वारा इस तर्क पर कि 'नियमों' के नियम 43 (बी) के तहत उस कार्यवाही को परिवर्तित करते समय, प्रतिवादी यह शामिल करने में विफल रहे कि क्या यह 'गंभीर कदाचार' या 'सरकार को आर्थिक नुकसान' के कारण है, पटना उच्च न्यायालय के विद्वान वकील ने एक बार फिर सफलतापूर्वक स्पष्ट किया है कि 'बिहार पेंशन नियमों' के तहत सेवा में रहते हुए शुरू की गई विभागीय कार्यवाही सेवानिवृत्ति के बाद भी जारी रही और 'गंभीर कदाचार' शब्दों का अभाव कार्यवाही को दूषित नहीं करेगा। यह न्यायालय **शम्भु सरण बनाम बिहार राज्य और अन्य उपरोक्त 2000 (1) पी.एल. जे. आर. -665 में पूर्ण पीठ** के आदेश के कंडिका 8 को शामिल करना चाहेगा, जो इस प्रकार है

"8. ध्यान देने योग्य दूसरा बिंदु यह है कि नियम 43 (बी) में एक ऐसे मामले के बीच अंतर किया गया है जहां इस तरह की सेवानिवृत्ति के समय पहले से ही

अनुशासनात्मक जांच लंबित है और जहां सेवानिवृत्ति के समय कोई अनुशासनात्मक जांच लंबित नहीं है। कुछ सुरक्षा उपाय प्रदान किए गए हैं ताकि सेवानिवृत्ति के बाद कोई अनुचित उत्पीड़न न हो जब उनकी सेवानिवृत्ति से पहले कोई कार्यवाही शुरू नहीं की गई थी। भले ही ऐसी सेवानिवृत्ति के समय कोई अनुशासनात्मक कार्यवाही लंबित नहीं है, संबंधित सरकारी कर्मचारी के हितों की रक्षा के लिए खंड (i), (ii) और (iii) द्वारा अनुध्यात कुछ शर्तें लगाई गई हैं। सेवानिवृत्ति के बाद एक नई कार्यवाही शुरू करने के लिए संबंधित प्राधिकारी की शक्तियों पर कुछ सीमाएं, जहां ऐसी शक्ति के किसी भी दुरुपयोग को रोकने के लिए ऐसी सेवानिवृत्ति से पहले ऐसी कोई कार्यवाही शुरू नहीं की गई थी। लेकिन इस तरह की सुरक्षा प्रदान करने का सवाल ही पैदा नहीं होता है यदि संबंधित सरकारी कर्मचारी की सेवानिवृत्ति के समय पहले से ही कोई अनुशासनात्मक कार्यवाही लंबित है। ऐसे मामले में किसी भी तरह के उत्पीड़न का कोई सवाल ही नहीं है और तदनुसार, कोई शर्त नहीं लगाई गई है। ये उसी के लिए एक अच्छा कारण है। जब तक कि वह शक्ति सेवानिवृत्त होने के बाद उक्त प्रावधान के आधार पर प्रदान नहीं की जाती है, तब तक संबंधित कर्मचारी आसानी से कह सकता है कि वह किसी भी कार्रवाई के दायरे से बाहर था। मामले के उस दृष्टिकोण से, यह प्रावधान नियम में ही किया गया है और नियम में ही यह विचार किया गया है कि एक अनुशासनात्मक कार्यवाही, यदि पहले से ही शुरू की गई है, तो सेवानिवृत्ति के बाद भी जारी रखी जा सकती है। जैसा कि हम पहले ही कह चुके हैं कि इसे प्रावधान की भाषा से ही लिखा जा सकता है, और, मामले के किसी भी दृष्टिकोण में जिसे आवश्यक निहितार्थ द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। तदनुसार, हमारे विचार में, यह संबंधित प्राधिकारी के लिए एक अनुशासनात्मक जांच जारी रखने के लिए खुला है जो उनकी सेवानिवृत्ति से पहले शुरू की गई थी। हमारे कथन में, एक बार ऐसी कार्यवाही शुरू होने के बाद, भले ही संबंधित व्यक्ति सेवा से सेवानिवृत्त हो जाए, ऐसी कार्यवाही जारी रखी जा सकती है और यह

आवश्यक नहीं है कि इसे जारी रखने की अनुमति देने से पहले उस प्रभाव का कोई सरकारी आदेश होना चाहिए। ऐसे मामले के संबंध में नियम 43 में ऐसी कोई शर्त नहीं रखी गई है, जहां ऐसी सेवानिवृत्ति के बाद नई कार्यवाही शुरू करने के संबंध में तीन शर्तों के अनुसार ऐसी कार्यवाही पहले ही शुरू की जा चुकी है। हम ऐसी शर्त की आवश्यकता को आयात नहीं कर सकते जो नियमों में नहीं है। यह कैसस ओमिसस के प्रिंसिपल के खिलाफ होगा। यदि हम इस तर्क को स्वीकार करते हैं कि ऐसी कार्यवाही जारी रखने से पहले सरकार के इस तरह के आदेश की आवश्यकता है, तो हम नियम में एक शर्त पेश करेंगे, जिसके लिए नियम प्रदान नहीं करता है, मामले के उस दृष्टिकोण में, हम बाद वाली खंड पीठ द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से सहमत हैं और हम मानते हैं कि सिंघेश्वरी सहाय बनाम बिहार राज्य और अन्य के मामले में खंड पीठ का निर्णय जिसे 1979 बी. बी. सी. जे. - 1735 में प्रतिवेदित किया, सही ढंग से तय नहीं किया गया है।

66. इसके अलावा जहां तक गैर-मौखिक वाले आदेश (आदेशों) के बारे में प्रस्तुत करने का संबंध है, इस अदालत का मानना है कि जब पूछताछ अधिकारी के निष्कर्षों के साथ असहमति होती है, तो उसी का तर्क दिया जाना चाहिए, लेकिन जहां अनुशासनात्मक प्राधिकारी निष्कर्षों के साथ सहमत है, तो आदेश (आदेशों) के पारित होने से कार्यवाही दूषित नहीं होगी।

67. यह न्यायालय **स्टेट बैंक ऑफ बीकेनार, जयपुर और बनाम प्रभु दयाल ग्रोवर** के मामले जो **(1995) 6 एस. सी. सी. 279** में कंडिका 13 और 14 के संदर्भ में उपरोक्त तर्क के समर्थन में रिपोर्ट दी, जो इस प्रकार है -

"13. इस प्रकार दिए गए उत्तर को ध्यान में रखते हुए, अब यह देखना होगा कि क्या विनियमों के तहत, संबंधित अधिकारियों को अपने निर्णय के कारण देने की आवश्यकता है। विनियम 68 (3) उस प्रक्रिया को निर्धारित करता है जिसका अनुशासनात्मक प्राधिकारी को जांच अधिकारी की रिपोर्ट सहित जांच की कार्यवाही प्राप्त करने के बाद पालन करना आवश्यक है। इसके सावधानीपूर्वक अवलोकन पर हम पाते हैं

कि केवल उन मामलों में जहां अनुशासनात्मक प्राधिकारी नई या आगे की जांच का निर्देश देना आवश्यक समझता है या जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत है, उसे अपने ऐसे निर्देशों के कारणों को दर्ज करना पड़ता है, लेकिन ऐसा कोई दायित्व नहीं है यदि वह जाँच अधिकारी के निष्कर्षों से सहमत हैं। इसलिए, यह वैध रूप से अनुमान लगाया जा सकता है कि जब तीन तथ्य स्थितियों में से केवल पहले दो में कारणों को दर्ज करने के लिए विनियमों में स्पष्ट प्रावधान किए गए हैं-और दूसरी नहीं-तो जांच अधिकारी के निष्कर्षों के साथ सहमति के मामले में कारणों को दर्ज करने का भी कोई निहित दायित्व नहीं है। भले ही हम इस आधार पर आगे बढ़ते हैं कि ऐसा दायित्व अंतर्निहित है, फिर भी अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आदेश को गलत नहीं माना जा सकता है क्योंकि, उसके अवलोकन पर, हम पाते हैं कि जांच अधिकारी के निष्कर्षों से सहमत होने से पहले उसने पूरी कार्यवाही का अध्ययन किया है और उसमें अपना दिमाग लगाया है। हमारी सुविचारित राय में, जब अनुशासनात्मक प्राधिकारी जांच अधिकारी के निष्कर्षों से सहमत होता है और ऐसे निष्कर्षों के समर्थन में उसके द्वारा दिए गए कारणों को स्वीकार करता है, तो दंडित करने वाले प्राधिकारी के लिए उन निष्कर्षों पर पहुंचने के लिए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करना आवश्यक नहीं है, इसलिए हम श्री दत्ता के इस तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि सजा का आदेश निरस्त करने के लिए उत्तरदायी था क्योंकि यह एक गैर-मौखिक आदेश था और इसमें कोई कारण नहीं था।

14. यह हमें अपीलीय प्राधिकारी के आदेश पर लाता है। विनियम 70 (2) के तहत, अपीलीय प्राधिकरण को इस बात पर विचार करने की आवश्यकता है कि क्या संबंधित अधिकारी के खिलाफ दर्ज किए गए निष्कर्ष उचित हैं और/या क्या जुर्माना अत्यधिक या अपर्याप्त है और उचित आदेश पारित कर जुर्माने की पुष्टि करने, बढ़ाने, कम करने या रद्द /दरकिनार करने या मामले को उस प्राधिकारी को भेजने का आदेश जो जुर्माना लगाता है या किसी अन्य प्राधिकरण को ऐसे निर्देशों के साथ जो वह मामले

की परिस्थितियों में उचित समझता है। यह विनियमन अपीलीय प्राधिकरण को अपने आदेश के लिए कोई कारण देने के लिए भी बाध्य नहीं करता है। यह मानते हुए कि आवश्यक निहितार्थ से इस विनियमन के लिए अपीलीय प्राधिकारी को कारण देने की भी आवश्यकता है, फिर भी इसके आदेश को अमान्य नहीं किया जा सकता है, क्योंकि हम पाते हैं कि उसने अनुशासनात्मक कार्रवाई और ग्रोवर द्वारा की गई प्रस्तुतियों से संबंधित रिकॉर्ड/अभिलेख और कार्यवाही पर विचार करके अपने दायित्व का निर्वहन किया है। दूसरे शब्दों में, आदेश स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अपीलीय प्राधिकारी ने न केवल जांच की कार्यवाही पर अपना दिमाग लगाया था, बल्कि ग्रोवर द्वारा अपनी अपील में उठाए गए आधारों और ऐसे आवेदन पर पाया कि अपील में कोई सार नहीं था। "

68. 2011 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं.-4739 द्वारा दूसरी रिट याचिका के संबंध में, जिसे दिनांक 10.02.2006 के आदेश को वापस लेने को चुनौती देने के लिए प्राथमिकता दी गई है, जिसके द्वारा उसे दिए गए सुपर टाइम स्केल का संबंध है, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि याचिकाकर्ता को आरोपों का दोषी पाया गया था और सजा का आदेश पारित किया गया था, वह उसे सुपर टाइम स्केल देने का दावा नहीं कर सकता है। इसके अलावा, जैसा कि श्री पीयूष लाल ने सही ही बताया है, उनकी रिट याचिका (2006 का सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 13586) को पटना उच्च न्यायालय द्वारा अनुमति दी गई थी, इसे उच्च न्यायालय द्वारा अपने प्रशासनिक पक्ष में 2008 के एस. एल. पी. (सी) सं. 23747 के माध्यम से चुनौती दी गई थी, जिसकी सुनवाई 2008 की एस. एल. पी. (सी) संख्या 22890 के साथ की गई थी और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दोनों याचिकाओं को इस प्रकार उक्त वापस बुलाने के आदेश पर मुहर लगाने की अनुमति दी थी। इसके अलावा, उक्त स्केल के अनुदान के लिए, एक कर्मचारी के पास एक बेदाग रिकॉर्ड होना चाहिए और उसके अभाव में, एक बार उसके खिलाफ आरोप साबित हो जाने के बाद और उसे पांच प्रतिशत पेंशन रोकने के लिए दंडित किया गया है, याचिकाकर्ता सुपर टाइम स्केल का हकदार नहीं है।

69. हमें उच्च न्यायालय द्वारा उद्धृत मामले को दर्ज करना चाहिए **भारत संघ और अन्य बनाम के. वी. जानकीरमन और अन्य** के मामले में, जिसे **(1991) 4 एस. सी. सी. 109** और पैराग्राफ/कंडिका-29 में रिपोर्ट किया इस प्रकार है:-

"29. हमारे अनुसार, न्यायाधिकरण ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की है कि जब कोई अधिकारी अपने कर्तव्यों के निर्वहन में दोषी पाया जाता है, तो उसके आचरण में सुधार और अनुशासन को लागू करने और प्रशासन में शुद्धता सुनिश्चित करने के लिए जुर्माना लगाना आवश्यक है। पहली बार में, बर्खास्तगी से कम जुर्माना रैंक में कमी से लेकर निंदा तक अलग-अलग होगा। हमें यकीन है कि न्यायाधिकरण का इरादा यह नहीं है कि पदोन्नति अधिकारी को दी जानी चाहिए। मूल तिथि तब भी जब दिया गया जुर्माना रैंक में कमी का हो। सैद्धांतिक रूप से, उन्हीं कारणों से, अधिकारी को पदोन्नति द्वारा पुरस्कृत नहीं किया जा सकता है, भले ही जुर्माना रैंक में कमी के अलावा अन्य हो। कर्मचारी को पदोन्नति का कोई अधिकार नहीं है। उसे केवल पदोन्नति के लिए विचार किए जाने का अधिकार है। एक पद पर पदोन्नति और उससे भी अधिक, एक चयन पद पर, कई परिस्थितियों पर निर्भर करता है। पदोन्नति के लिए अर्हता प्राप्त करने के लिए, एक कर्मचारी से कम से कम एक बेदाग रिकॉर्ड की अपेक्षा की जाती है। एक स्वच्छ और कुशल प्रशासन सुनिश्चित करने और सार्वजनिक हितों की रक्षा के लिए यह न्यूनतम अपेक्षित है। दुराचार के दोषी पाए जाने वाले कर्मचारी को अन्य कर्मचारियों के बराबर नहीं रखा जा सकता है और उसके मामले को अलग तरीके से देखा जाना चाहिए। इसलिए जब पदोन्नति के मामले में उसके साथ अलग व्यवहार किया जाता है तो कोई भेदभाव नहीं होता है। किसी भी प्रशासन से कम से कम यह उम्मीद की जाती है कि वह किसी कर्मचारी को उस तारीख से पूर्वव्यापी रूप से पदोन्नति के साथ पुरस्कृत नहीं करता है जब उस तारीख से पहले उसके आचरण के लिए उसे दंड दिया जाता है। जब किसी कर्मचारी को दोषी ठहराया जाता है और दंडित किया जाता है और इसलिए

उसे कम से कम उस तारीख तक पदोन्नत नहीं किया जाता है जिस दिन उसे दंडित किया जाता है, तो उसे अतिरिक्त दंड के अधीन नहीं कहा जा सकता है। ऐसी परिस्थितियों में पदोन्नति से इनकार करना दंड नहीं है, बल्कि उसके आचरण का एक आवश्यक परिणाम है। वास्तव में, पदोन्नति के लिए एक कर्मचारी पर विचार करते समय उसके पूरे रिकॉर्ड/अभिलेख को ध्यान में रखा जाना चाहिए और यदि एक पदोन्नति समिति कर्मचारी पर लगाए गए दंड को ध्यान में रखती है और उसे पदोन्नति से इनकार करती है, तो इस तरह का इनकार अवैध और अनुचित नहीं है। यदि, इसके अलावा, पदोन्नति प्राधिकारी किसी कर्मचारी को उसकी पदोन्नति पर विचार करते समय अतीत में दिए गए दंड या दंड को ध्यान में रख सकता है और उस आधार पर उसे पदोन्नति से वंचित कर सकता है, तो यह अभिनिर्धारित करना तर्कहीन होगा कि वह दंड को विचार में नहीं ले सकता है जब यह कार्यवाही के लंबित होने के कारण बाद की तारीख में लगाया जाता है, हालांकि यह उस तारीख से पहले के आचरण के लिए है जब प्राधिकारी पदोन्नति पर विचार करता है। इन कारणों से, हमारा विचार है कि न्यायाधिकरण उक्त ज्ञापन के पैराग्राफ/कंडिका 3 के खंड (iii) के बाद दूसरे उप-पैराग्राफ/कंडिका के उक्त हिस्से को रद्द करने में सही नहीं है। इसलिए हम न्यायाधिकरण के उक्त निष्कर्षों को दरकिनार कर देते हैं।

70. सामने आने वाले समग्र तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय मानता है कि विभागीय कार्यवाही/सजा आदेश किसी भी अवैधता/अनियमितता से ग्रस्त नहीं है। इसके अलावा, चूंकि याचिकाकर्ता को आरोपों का दोषी ठहराया गया था, इसलिए वह पहले भी वापस किए गए सुपर टाइम स्केल का हकदार नहीं है।

71. हालाँकि, इस प्रकार लिए गए निर्णयों की पुष्टि करते हुए , हमारा विचार है कि प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा हमेशा के लिए पाँच प्रतिशत पेंशन की कटौती के लिए पारित आदेश दोबारा विचार किया जा सकता है।

72. हम तदनुसार आदेश देते हैं कि याचिकाकर्ता प्रतिवादी संख्या 2 के समक्ष आज से चार सप्ताह के भीतर प्रतिनिधित्व कर सकता है, जिस पर विचार किया जाएगा और जल्द से जल्द एक उचित आदेश पारित किया जाएगा।

74. उपरोक्त अवलोकन के साथ, जबकि 2011 का सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 4937 का निपटारा किया जाता है, 2011 का सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 4749 खारिज किया जाता है।

(के. विनोद चंद्रन, मुख्य न्यायाधीश)

जगदीश/नेहा -

(राजीव रॉय, न्यायमूर्ति)

खण्डन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।